International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 2; Issue 5; September 2017; Page No. 441-442

प्रेमचंद के साहित्य में नारी के सामाजिक आयाम

चन्द्रसैन
कुरुक्षेत्र विश्व विद्यालय, कुरुक्षेत्र, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के 'उपन्यास सम्राट', 'कलम का सिपाही' व 'कलम का मजदूर' प्रेमचंद जी अद्वितीय व्यक्तित्व व बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे। समाज की समस्याओं का सटीक व यथार्थ वर्णन कर उन्होंने 'साहित्य ही समाज का दर्पण है' कथन को सत्य सिद्ध किया है। प्रेमचंद जी सदैव समाज के हाशिए पर रहे वर्ग के शोषण के कुशल चितेरे रहे हैं। उन्होंने अपने साहित्य में दमित, शोषित व पीड़ित नारी का यथार्थ चित्रण किया है। वास्तव में, किसी को भारतीय संस्कृति का अध्ययन करना हो तो उसे प्रेमचंद के साहित्य का अध्ययन कर इसमें पूर्ण सफलता प्राप्त हो सकती है। सदियों से पीड़ित–प्रताड़ित नारी का मार्मिक चित्रण उनके साहित्य में ही मिलता है। नारी–जीवन के प्रत्येक पक्ष को उन्होंने अपने साहित्य में चित्रित किया है। वास्तव में नारी के त्याग व बलिदान को समाज ने बहुत ही कम करके आँका है। प्रेमचंद जी ने अपने साहित्य में नारी के सामाजिक आयाम को बखूबी उकेरा है। उनके साहित्य का विस्तृत व गहन अध्ययन करके हमें नारी के सामाजिक आयाम का यथार्थ ज्ञान होता है।

प्रेमचंद जी के साहित्य में नारी के सामाजिक आयाम का अध्ययन करने के लिए हमें प्रेमचंद जी की नारी के प्रति दृष्टि समझनी पड़ेगी। किसी भी लेखक की किसी भी सामाजिक समस्या के प्रति दृष्टि उसके व्यक्तिगत अनुभवों से भी प्रभावित होती है। नारी के प्रति प्रेमचंद जी का दृष्टिकोण उनके जीवन में घटी बचपन से अनेक घटनाओं से बनता है। प्रेमचंद बचपन से ही मातृ–स्नेह से वंचित रहे। उनके पिता जी ने पुनर्विवाह किया, ताकि संतान को माता–का स्नेह मिल सके, परंतु पिता का पुनर्विवाह उनके लिए घोर शारीरिक व मानसिक यंत्रणा–युक्त रहा। कठोर व निष्ठुर विमाता के संरक्षण में उनका बाल–मन अनेक कुंठाओं, असंतोष व क्षोभ से भर गया था। विमाता के विषय में उनके व्यक्तिगत अनुभव सदैव ही उनके साहित्य में परिलक्षित होते रहे। प्रेमचंद जी के माता व विमाता दो भिन्न मातृत्व स्वरूपों का वर्णन अंत तक कटु–अनुभव युक्त रहा। विमाता ने उनके जीवन को यंत्रणाओं से भर दिया। 'दूसरी शादी', 'विमाता', 'अलग्योझा' आदि कहानियां प्रेमचंद जी द्वारा भोगी गई। जिंदगी के माता–विमाता के यथार्थ को प्रस्तुत करती है। ये नारी के काल्पनिक पारंपरिक आयाम न होकर उनके साहित्य के नारी के यथार्थ सामाजिक आयाम है। बाल्यावस्था के उपरांत प्रेमचंद जी का विवाह किशोरावस्था में ही एक रोगी, क्रोधी, झगडालू व कर्कशा स्त्री के साथ हो गया। 'प्रेमचंद' जी कभी भी इस विवाह से संतुष्ट नहीं थे। वे बेहद खिन्न व क्षुब्ध हुए। उनका दाम्पत्य जीवन घोर कष्टकारी हो गया। विमाता व पत्नी के बीच हर रोज झगड़े होते थे। प्रतिदिन के झगड़ो से तंग आकर इन्होंने अपनी पत्नी को मायके भेजकर कभी पुनः वापस नहीं बुलाया। बाल–विधवा शिवरानी देवी से विवाह करके वे पूर्णतः संतुष्ट हुए। प्रेमचंद जी की कहानियों में रचित आदर्श गृहणी वास्तव में उनकी पत्नी शिवरानी देवी ही थी। वास्तव में शिवरानी देवी में आदर्श गृहणी के गुणों को देखकर ही प्रेमचंद का नारी के प्रति दृष्टिकोण सकारात्मक हुआ। अपने पहले विवाह के बारे में उन्होंने स्वयं कहा है "मेरे विवाहित जीवन में भी कोई रोमांस नहीं है। वह बिल्कुल साधारण ढंग का है। मेरी पहली पत्नी 1904 में मर गई। वह अभागी स्त्री थी। वह देखने में तनिक भी अच्छी नहीं थी और मैं उससे संतुष्ट नहीं था, फिर भी जैसे पति करते हैं, मैं बिना शिकवे–शिकायत के उसका निर्वाह करता रहा। जब वह मर गई तो मैंने एक बाल–विधवा से शादी कर ली और मैं उसके साथ बहुत सुखी हूं। वह निर्भीक, साहसी, न झुकने वाली और ईमानदार स्त्री है, जो अपराध की जिम्मेदारी ले लेती है और काम में प्रवृत्त होने को विवश कर देती है। मैं उसके साथ सुखी हूं।"[1]

इस प्रकार प्रेमचंद जी ने विमाता व झगडालू पत्नी के साथ दुःखद अनुभूतियाँ स्वयं झेलीं व बाद में आदर्श पत्नी के साथ सुखद दाम्पत्य जीवन का अनुभव भी लिया। अपने दूसरे विवाह के पश्चात् ही प्रेमचंद जी तटस्थ होकर नारी के आदर्श व यथार्थ रूपों को अवलोकन कर साहित्य में स्थान देने को तत्पर हुए। बाल–विवाह, अनमेल विवाह, की कुरीतियों के विरुद्ध व विधवा–विवाह के समर्थन के पीछे प्रेमचंद जी का स्वयं का भोगा हुआ यथार्थ ही है। नारी के सामाजिक आयाम में प्रेमचंद जी का चित्रण आदर्शोन्मुख यथार्थवाद ही था।

प्रेमचंद जी की नारी के प्रति दृष्टि अपने पूर्व के हिंदी साहित्य से सर्वथा भिन्न रही। प्राचीन साहित्य में नारी के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण व्यक्त किया गया। मोक्ष–प्राप्ति के लिए कन्यादान अत्यंत जरुरी था। अतः घर में कन्या का जन्म अशुभ नहीं माना जाता था। माता–पिता कन्यादान कर मोक्ष प्राप्ति का रास्ता प्राप्त कर प्रसन्न होते थे। गार्गी, मैत्रेयी, श्रद्धा, घोष, सुलभा आदि नारियाँ अत्यंत मेधावती व तर्कशक्ति से युक्त नारियाँ थी। स्वयंवर की प्रथा के कारण नारियाँ अपना वर स्वयं चुनने में स्वतंत्र थी। विवाह–संबंध जन्म–जन्मातेरों का साथ माने जाते थे। किसी को भी विवाह को तोड़ने की छूट नहीं थी। नारी अवध्य मानी जाती थी। दहेज मात्र विवाह पर दिया जाने वाला उपहार था। नारी को मातृशक्ति माना जाता था। उत्तर–वैदिक काल में नारी के प्रति हीन–भावना ने जन्म लिया। उसे शूद्र के समान ही माना गया। धार्मिक कार्यों, शिक्षा व संपति से वंचित कर दिया गया। नारी को अनेक बंधनों में जकड़ कर पुरुषों के अधीन कर दिया गया। विधवाओं के जीवन को कठोर बह्मचर्य का पालन करते हुए अनेक प्रकार से अशुभ व लांछित किया गया। आदिकालीन साहित्य में नारी को पुरुष की भोग्या के रूप में ही अधिक चित्रित किया गया है। वह पुरुष की नाममात्र की ही अर्धांगिनी मानी जाती रही। बौद्ध व जैन धर्मों ने उसे पंच मकार में से एक मानकर उसे हेय माना। उनके पंच–मकार, मांस, मदिरा, मुद्रा, मंत्र व मैथुन थे। सिद्ध और नाथों ने भी उसे विलास की सामग्री ही माना। मध्यकालीन साहित्य में

पर्दाप्रथा, बाल–विवाह, अनमेल विवाह, कन्या–हत्या, बहु–विवाह आदि अनेक कुरीतियों द्वारा नारी के शोषण का ही चित्रण हुआ है। भक्तिकाल में धार्मिक संतों ने भी नारी को मोक्ष में बाधा माना। रीतिकाल में तो नारी को मात्र विलासिता की सामग्री ही माना।

प्रेमचंद जी का साहित्य में पदार्पण एक अविस्मरणीय घटना रही, जिन्होंने सदियों से शोषित–उपेक्षित, नारी का यथार्थ चित्रण अपने साहित्य में किया। उन्होंने नारी के प्रति पूर्ण सहानुभूति दिखाई है। वे नारी जागरण के लिए कृत–संकल्प थे। प्रेमचंद जी अत्यंत सुलझे हुए आधुनिक विचारों के इन्सान थे। अतः उन्होंने विश्लेषण किया कि न तो सारा पुराना खराब है और न ही सारा नवीन अच्छा है। उन्होंने पुरातन–नवीन के सारे अच्छे आदर्शों के आधार पर अपने नारी चरित्रों की सृष्टि की। उनकी नारीत्व–कल्पना आधुनिक विचारधारा से प्रभावित, मार्क्सवाद से सयंमित होकर भी भारतीय संस्कृति तक सीमित रही। उनकी नारी भारतीय संस्कृति की वाहक बनी। सेवा, उदारता, पवित्रता, भक्ति, सहिष्णुता व त्यागमयी भावना के उच्चतम आदर्शों से युक्त उनकी नारी पुरुष से कहीं अधिक श्रेष्ठ गुणवती है। नारी की दुर्दशा के लिए उन्होंने पुरुषों व दूषित सामाजिक व्यवस्था को उत्तरदायी ठहराया। उनकी नारी प्रगतिशील विचारों वाली शिक्षित नारी है। उनकी नारी आधुनिक विचारों वाली उच्छृंखल नारी नहीं है। वे भारतीय नारी के आदर्शों से किसी प्रकार का समझौता नहीं कर सके। उन्होंने उसे पुरुषों के समान वैवाहिक स्वतंत्रता, सम्पति का अधिकार दिलाने की भरसक चेष्ठा अपने साहित्य के माध्यम से की। नारी को शिक्षा दिलाकर उसे स्वावलंबी बनाना उनकी दृष्टि में आवश्यक था। पथभ्रष्ट नारियों का यथार्थ चित्रण कर उनके मिथ्या अंह, विकृति व कामकुंठा द्वारा उनके पतन को भी उन्होंने अपने साहित्य में उद्घाटित किया है। यह वर्णन व चित्रण युगीन नारी को सचेत भी करता है। उनका साहित्य आदर्शवाद से आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ओर बढ़कर विशुद्ध यथार्थवाद की तरफ अग्रसर होता है।

प्रेमचंद जी अपनी तीव्र व प्रखर सामाजिक चेतना के आधार पर एक युग–द्रष्टा व समाज–द्रष्ठा साहित्यकार थे। प्रेमचंद युगीन समाज में भी नारी को उसका उचित स्थान नहीं मिला था। बाल–विवाह, अनमेल विवाह, बहु विवाह व दहेज प्रथा उनके युग में भी प्रचलित थी। तलाक की प्रथा नहीं थी, परंतु पत्नी–त्याग के उदाहरण भी मिलते हैं। वेश्यावृत्ति प्रचलित थी। सती–प्रथा कम होती जा रही थी। विधवा–पुनर्विवाह वर्जित थे परंतु विधुर पुनर्विवाह सामान्य थे। ग्रामीण व शहरी स्त्रियों की जीवन शैली में भी पर्याप्त अंतर था। शहरों में शिक्षित नारी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक थी जबकि ग्रामीण नारियाँ अपनी अशिक्षा के कारण शोषित, उपेक्षित जीवन जीने को बाध्य थी। मध्यवर्गीय नारी का जीवन अधिक नारकीय था। इस प्रकार प्रेमचंद जी के साहित्य में नारी के सामाजिक आयाम दर्शाने में युगीन परिवेश महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था।

प्रेमचंद जी ने नारी के विभिन्न सामाजिक आयामों विवाह, अनमेल विवाह, बहु विवाह, अंतर्जातीय विवाह व दहेज आदि पर भी गंभीर चिंता व चिंतन किया है। प्रेमचंद जी प्रेमवंचिता नारी के लिए मृत्यु ही श्रेयस्कर मानते हैं। "उसको यदि जीवन में प्रेम न मिले तो उसका मर जाना ही अच्छा है।"[2] उस युग की वैवाहिक कुरीतियों से प्रेमचंद जी क्षुब्ध थे। विवाह में वर व कन्या दोनों की सहमति को वे अनिवार्य समझते थे। दहेज को वे अत्यंत बुरी प्रथा मानते थे। वे कहते है– "दहेज बुरा रिवाज है बेहद बुरा।"[3] "लेन–देन से वर और कन्या दोनों की के घरवाले जेरबार होते है।"[4] यद्यपि प्रेमचंद जी जाति–पाँति, ऊँच–नीच, छुआछूत के भेदभाव को अमानवीय मानते थे तथापि वे अंतर्जातीय विवाह पर निष्पक्ष रूप से विचार नहीं कर पाए। अंतर्जातीय विवाहों को सर्वत्र ही दुःखात दिखाकर प्रेमचंद जी ने इसमें स्वयं की असहमति को व्यक्त किया है। प्रेम चंद जी विवाह–विच्छेद को भी स्वीकार नहीं करते थे। वे कहते हैं, "विवाह को मैं सामाजिक समझौता समझता हूं। उसको तोड़ने का अधिकार न पुरुष को है न स्त्री को। समझौता करने से पहले आप स्वाधीन है, समझौता हो जाने के बाद आपके हाथ कट जाते हैं।"[5] विवाह–विच्छेद का खामियाजा अंततः नारी को ही भुगतान पड़ता है, परंतु यदि उसका वैवाहिक जीवन अत्यंत ही नारकीय दशा में पहुँच गया है, तो उसे विच्छेद करना ही चाहिए। आधुनिकता के नाम पर पर–पुरुषों के साथ क्लबों में नाचती नारियों की फूहड़ता व निर्लज्जता तथा काम–वासनाओं की तृप्ति के उचित–अनुचित मार्ग पर चलती नारी उन्हें पसंद नहीं है। वे मानते है कि पति–पत्नी का एकांत समर्पण ही दाम्पत्य जीवन का आधार है। नारी के प्रेम का सर्वाधिक उत्कृष्ट रूप उन्हें उसके मातृत्व में ही मिलता है। वे कहते है, "नारी केवल माता है और उसके उपरांत वह जो कुछ है सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है। मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना, सबसे बड़ी तपस्या सबसे बड़ा और सबसे महान् विषय है।"[6] वे कहते है, "नारी चरित्र में अवस्था के साथ मातृत्व का भाव दृढ़ होता जाता है। यहां तक कि एक समय ऐसा आता है जब नारी की दृष्टि में युवकमात्र पुत्रतुल्य हो जाते हैं।"[7] विमाता के संदर्भ में उन्होंने आदर्श और अनादर्श का तटस्थ रूप से विवेचन किया है। 'निर्मला' उपन्यास में वे कहते है, "ईश्वर न करे, लड़कों को सौतेली माँ से पाला पड़े। जिसे अपना बना–बनाया घर उजाडना हो, अपने प्यारों बच्चों की गर्दन पर छुरी फेरवानी हो, वह बच्चों के रहते अपना दूसरा ब्याह करे। ऐसी देवी ने जन्म ही नहीं लिया, जिसने सौत के बच्चे को अपना समझा हो।"[8] अधिक संतानोपति के कारण जीर्ण और अस्वस्थ रहने वाली माताओं के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुए कहते हैं, "दो बच्चों से ज्यादा जिसके हों, उसे कम–से–कम पांच वर्ष की कैद, उसमें पांच महीने से कम काल–कोठरी न हो।"[9] इस प्रकार प्रेमचंद जी ने नारी के सामाजिक आयामों पर बखूबी अपनी लेखनी चलाई है। पत्नी, माता व विमाता आदि नारी के विभिन्न सामाजिक आयामों को उन्होंने बड़े ही विवेचनात्मक ढंग से चित्रित किया है। नारी के सामाजिक आयामों का चित्रण करने में वे पूर्णतः सफल रहे हैं।

संदर्भ

1. इंद्रनाथ मदान, प्रेमचंदः एक विवेचन, पृष्ठ–155–156
2. हंसराज रहबर, प्रेमचंदः जीवन, कला और कृतित्व, पृष्ठ–228
3. प्रेमचंद, निर्मला– पृष्ठ–29
4. प्रेमचंद, गोदान– पृष्ठ–218
5. प्रेमचंद, गोदान– पृष्ठ–53
6. प्रेमचंद, गोदान– पृष्ठ–167
7. प्रेमचंद, मानसरोवर भाग–4, पृष्ठ–175
8. प्रेमचंद, निर्मला, पृष्ठ–36
9. प्रेमचंद, मानसरोवर–भाग–2, पृष्ठ–247